काव्य कुसुम

पाठ्य-पुस्तक

बी.बी.ए/बी.एच.एम/एम. टी.ए./बी.बी.ए (एविएशन)

तथा एस.ई.पी अधीन सभी बी.बी.ए कोर्स

B.B.A/B.H.M./M.T.A./B.B.A(Aviation) and all BBA Courses under SEP

द्वितीय सेमिस्टर / **II SEMESTER**

संपादक

डॉ. मोहम्मद अन्जरुल हक

डॉ. रोहिणी बाई.एस

प्रकाशक

प्रसारांग

बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय

बेंगलूरु-560 001

KAVYA KUSUM

Edited by :
Dr. Mohamed Anzarul Haq,
Dr. Rohini Bai. S

© बेंगलूर नगर विश्वविद्यालय

प्रथम संस्करण 2024

Pages - 40

प्रधान संपादक
प्रो. शेखर

मूल्य :

प्रकाशक
प्रसारांग
बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय
बेंगलूरु-560 001

भूमिका

बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय में 2024-25 शैक्षिक वर्ष से एसईपी-2024 पद्धति के अनुसार स्नातक वर्गों के लिए नया पाठ्यक्रम जारी किया जा रहा है।

इस पाठ्यक्रम की संरचना ऐसी की गई है कि इसके अध्ययन के पश्चात हिंदी साहित्य के विद्यार्थी यह जान सके कि साहित्य का विषय विश्लेषण और सराहना कैसे की जाए और दिए गए विषय को पढ़ने की समझ किस प्रकार विकसित की जाए, ताकि विद्यार्थी भाषा और साहित्य के उद्देश्य से भली-भांति परिचित हो सके। जैसे विज्ञान और आदि विषयों के अध्ययन के साथ यह भी अधिक उपयोगी है। एस.ई.पी सेमेस्टर (सीबीसीएस) पद्धति के अनुसार यह पाठ्यक्रम निर्माण किया गया है।

इस पृष्ठभूमि में हिंदी अध्ययन मंडल ने विभाग अध्यक्ष प्रो. शेखर के मार्गदर्शन में पाठ्य पुस्तक का निर्माण किया है।

विश्वास है कि यह कविता संकलन छात्र समुदाय के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध होगा। विश्वविद्यालय की यह शुभेच्छा है कि साहित्य और समाजशास्त्री विषयों के लिए भी अधिक उपयोगी और प्रासंगिक लगे। इस पाठ्य पुस्तक के निर्माण में योग देने वाले सभी के प्रति विश्वविद्यालय आभारी है।

प्रो.लिंगराज गांधी
कुलपति
बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय
बेंगलूरु 560 001

प्रधान संपादक की कलम से.....

बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय शैक्षिक क्षेत्र में नए-नए विषयों को अपने अध्ययन की सीमा में ले रहा है। अध्ययन को एसईपी-2024 नीति के अनुसार प्रस्तुति करने का प्रयत्न हो रहा है। साहित्यिक विषयों को आज की बदलती परिस्थिति के अनुसार रखने के उद्देश्य से पाठ्यक्रम को प्रस्तुत किया जा रहा है।

एसईपी सेमेस्टर पद्धति के अनुसार स्नातक वर्गों के लिए पाठ्यक्रम का निर्माण किया जा रहा है। इस पाठ्य पुस्तक के निर्माण में योग देने वाले संपादकों के प्रति मैं आभारी हूँ।

इस नई पाठ्य पुस्तक के निर्माण में कुलपति महोदय प्रो. लिंगराज गांधी जी ने अत्यधिक प्रोत्साहन दिया तदर्थ मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ।

इस पाठ्यक्रम को राज्य शिक्षा नीति के ध्येयोद्देश्य को ध्यान में रखते हुए किया गया है। कविता के विविध आयामों को इस पाठ्य-पुस्तक में शामिल किए गए हैं। आशा है कि सभी विद्यार्थीगण इससे अवश्य लाभान्वित होंगे।

प्रो. शेखर

अध्यक्ष (बी.ओ.एस)

बेंगलूरु नगर विश्वविद्यालय

बेंगलूरु-560 001

अनुक्रमणिका

क्र.सं				पृष्ठ संख्या
1.	कबीरदास की साखियाँ	-	कबीरदास	6-7
2.	मीराबाई की पदावली	-	मीराबाई	8-9
3.	व्यापार	-	मैथिली शरणगुप्त	10-14
4.	नवयुवक	-	अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'	15-16
5.	गुरुदक्षिणा	-	रामकुमार वर्मा	17-18
6.	कुंती-कर्ण संवाद	-	रामधारी सिंह 'दिनकर'	19-22
7.	बादल को घिरते देखा है	-	नागार्जुन	23-24
8.	कैदी और कोकिला	-	माखनलाल चतुर्वेदी	25-29
9.	वीरों का कैसा हो बसंत	-	सुभद्राकुमारी चौहान	30-31
	परिशिष्ट कवि परिचय			32-40

1. कबीरदास की साखियाँ

कबीर सतगुरु नां मिल्या, रही अधूरी सीख।
स्वांग जति का पहरि, घरि-घरि मांगै भीख ।। 1।।

जिहि घटि प्रीति न प्रेम रस फुनि रसना नहीं राम ।
ते नर इस संसार में, उपजि षये बेकाम ।।2।।

कबीर हरि रस यौं पिया, बाकी रही न थाकि ।
पाका कलस कुंभार का, बहुरि न चढ़ै चाकि ।।3।।

कबीर सीप समंद की, रटै पियास पियास ।
समदहि तिणका बरि गिण, स्वाँति बूँद की आस ।।4।।

ये ऐसा संसार है, जैसा सैंबल का फूल।
दिन दस के ब्यौहार कौ, झूठै रंगि न भूलि ।।5।।

मनिषा जनम दुर्लभ है, देह न बारंबार ।
तरवर थै फल झड़ि पड़्या, बहुरि न लागै डार ।।6।।

माला पहन्यां कुछ नहीं, भगति न आई हाथि ।
माथौ मूंछ मुड़ाई करि, चल्या जगत के साथि ।।7।।

नां कछु किया ना करि सक्या, न करणे जोग सरीर ।
जे कछु किया हरि किया, ताथै भया कबीर कबीर ।।8।।

कमोदनीं जलहरि बसै, चंदा बसै आकासि ।
जो जाहि का भावता, सो ताही कै पास ।।9।।

कबीर सिरजनहार बिन, मेरा हितू न कोई ।
गुण औगुण बिहडै नहीं, स्वारथ बंधी लोई ।।10।।

2. मीराबाई की पदावली

मैं तो साँवरे के रँग राची । (टेक)
साजि सिंगार, बाँधि पग घुँघरू, लोकलाज साजि नाची ।।
गई कुमति, लई साध की संगत, भगत रूप भई साँची ।
गाइ-गाइ हरि के गुन निसिदिन, काल-व्याल सों बाँची ।।
उण बिन सब जग खारो लागत, और बात सब काची ।
मीराँ श्री गिरधरन लाल सूँ, भगत रसीली जाँची ।।

मैं तो गिरधर के घर जाऊँ । (टेक)
गिरधर म्हारो साँचो प्रीतम, देखत रूप लुभाऊँ ।।
रैण पड़ै तब ही उठि जाऊँ, भोर भये उठि आऊँ ।
रैण-दिनाँ वाके संग खेलूँ, ज्यूँ-त्यूँ ताहि रिझाऊँ ।।
जो पहिरावै सोई पहरूँ, जो देवै सो खाऊँ ।
मेरी उण की प्रीत पुराणीं, उण बिन पल न रहाऊँ ।।
जहाँ बैठावे तित ही बैठूँ, बेचै तो बिक जाऊँ ।
मीराँ के प्रभु गिरधर नागर, बार बार बलि जाऊँ ।।

मैं गिरधर रंग राती, सैया मैं । (टेक)
पचरंग चोला पहर सखी मैं झिरमिट खेलन जाती ।
ओह झिरमिट माँ मिल्यो साँवरो, खोल मिली तन गाती ।।
जिनका पिया परदेस बसत है, लिख-लिख भेजे पाती ।
मेरा पिया मेरे हीय बसत है, ना कहुँ आती जाती ।।
चंदा जायगा, सूरज जायगा, जायगी धरण अकासी ।
पवन-पाणि दोनूँ हीगया, अटल रहै अविनासी।।
सुरत-निरत का दिवला सँजोले, मनसा की करले बाती ।
प्रेम-हटी का तेल मँगाले, जगे रहया दिन-राती ।।

सतगुरु मिलिया, साँसा भाग्या, सैन बताई साँची ।
ना घर तेरा, ना घर मेरा, गावै मीराँ दासी ।।

बड़े घर ताली लागी रे,
म्यारा मन री उणारथ भागी रे। (टेक)
छीलरियै म्यारो चित नहीं रे, डाबरिये कुण जाव ?
गंगा-जमना सूँ काम नहीं रे, मैं तो जाइ मिलूँ दरियाव ।।
होल्याँ-मोल्याँ सूँ काम नहीं रे, सीख नहीं सिरदार ।
कामदाराँ सूँ काम नहीं रे, मैं तो जाब करूँ दरबार ।।
काच-कथीर सूँ काम नहीं रे, लोहा चढै सिर भार ।
सोना-रूपा सूं काम नहीं रे, म्हारे हीराँ रो वौपार।।
भाग हमारो जागियो रे, भयो समँद सूँ सीर।
इमरत प्याला छाँड़ि कै, कुण पीवै कड़वो नीर।।
पीपा कूं परचो दीन्हो, दिया रे खजीना पूर ।
मीराँ के प्रभु गिरधर नागर, घणी मिल्या छै हजूर।।

मीराँ लागो रंग हरी, औरन रंग अब अटक परी । (टेक)
चूड़ो म्हाँर तिलक अरु माला, सील-बरत सिणगारो ।
और सिंगार म्हाँर, दाय न आवै, यो गुर ग्यान हमारो ।।
कोई निंदो, कोई बिंदो, म्हें तो गुण गोविंद का गास्याँ ।
जिण मारग म्हाँरा साध पधारै, उणँ मारग म्हे जास्याँ ।।
चोरी न करस्याँ, जिव न सतास्याँ, काँई करसी म्हाँरो कोई ।
गज से उतर के खर नहिं चढ़स्याँ, ये तो बात न होई ।।

3. व्यापार

मैथिलीशरण गुप्त

इस. रत्नगर्भा भूमि पर हा दैव! ऐसी दीनता,
है शोच्य कृषि से कम नहीं व्यापार की भी हीनता ।
जिस देश के वाणिज्य की सर्वत्र धूम मची रही-
क्या पर-मुखापेक्षी नहीं है आज पद-पद पर वही ? ॥१!!

अब रख नहीं सकते स्वयं हम लाज भी अपनी अहो ।
रखते विदेशी वस्त्र उसको, सभ्य हैं हम, क्यों न हो ।
करती अपेक्षा आप अपनी पूर्ण जो जितनी जहाँ-
वह जाति उतनी ही समुन्नति प्राप्त करती है वहाँ ॥२॥

जो वस्तु देखो, "मेडइन" इंग्लैंड, इटली, जर्मनी
जापान, फ्रांस, अमेरिका वा अन्य देशों की बनी ।
होकर सजीव मनुष्य हम निर्जीव-से हैं हो रहे,
घर में लगाकर आग अपने बेखबर हैं सो रहे ।।३।।

कुल-नारियाँ जिनको हमारी हैं करों में धारती-
सौभाग्य शुभ चिह्न जिनको हैं सदैव विचारतीं,
वे चूड़ियाँ तक हैं विदेशी देख लो, बस हो चुका,
भारत स्वकीय सुहाग भी परकीय करके खो चुका ॥४॥

वे तुच्छ सुइयाँ भी विदेशी जो न हमको मिल सकें-
तो फिर पहनने के हमारे वस्त्र भी क्या सिल सकें ?
माचिस विदेशी हम न लें तो फिर अँधेरे में रहें,
हैं क्षुद्र छड़ियाँ तक विदेशी और आगे क्या कहें? ॥५॥

केवल विदेशी वस्तु ही क्यों अब स्वदेशी हैं कहाँ,
वह वेश-भूषा और भाषा, सब विदेशी हैं यहाँ।
गुण मात्र छोड़ विदेशियों के हम उन्हीं में सन गये,
कैसी नकल की, वाह! हम नक्काल पूरे बन गये ॥६॥

गर्दभ बना था सिंह उसकी खाल को पाकर कभी,
पर सिंह के-से गुण कहाँ, हँसने लगे उसको सभी ।
इस भाँति के नरपुंगवों की क्या यहाँ बढ़ती नहीं ?
पर हाय! काले भाल पर लाली कभी चढ़ती नहीं ।।७।।

सम्प्रति स्वदेशी की हमें है गन्ध भी भाती नहीं,
खस, केवड़ा, बेला, चमेली चित्त में आती नहीं ।
मस्तक न "लेवेंडर" बिना अब मस्त होता है अहो !
बस शौक पूरा हो हमारा देश ऊजड़ क्यों न हो ।॥८॥

सब स्वाभिमान डुबो चुके जो पूर्व-परावार में–
आश्चर्य है, हम आज भी हैं जी रहे संसार में।
किंवा इसे जीना कहें तो फिर कहें मरना किसे ?
जीता कहाँ है वह, नहीं है ध्यान कुछ अपना जिसे ? ।।९।।

आतीं विदेशों से यहाँ सब वस्तुएँ व्यवहार की,
धन-धान्य जाता है यहाँ से, यह दशा व्यापार की ।
कैसे न फैले दीनता, कैसे न हम भूखों मरें,
ऐसी दशा में देश की भगवान ही रक्षा करें । ॥१०॥

जिस वस्तु को हम दूसरों को बेचते हैं "एक" में,
लेते उसी को "बीस" में हैं डूबकर अविवेक में।
जो देश कच्चा माल ही उत्पन्न करके शान्त है,
उसका पतन एकान्त है, सिद्धान्त यह निर्भ्रान्त है ।।११।।

रालीब्रदर इत्यादि को हम बेचते जो माल हैं,
लेते वही पन्द्रह गुने तक मूल्य में तत्काल हैं।
आता विलायत से यहाँ वह माल नाना रूप में,
आश्चर्य क्या फिर हम पड़े हों जो अँधेरे कूप में ।॥१२॥

हम दूसरों को पाँच सौ की बेचते हैं जब रुई,
सानन्द कहते हैं कि हमको आय क्या अच्छी हुई ।
पर, दूसरे कहते कि ठहरो., वस्त्र जब हम लायेंगे, -
तब और पैंतालीस सौ लेकर तुम्हीं से जायेंगे । ॥१३॥

हा! आप आगे दौड़कर हम दीनता को ले रहे,
लेकर खिलौने, काँच आदिक अन्न-धन हैं दे रहे।
आवश्यकीय पदार्थ अपने यदि बनाते हम यहीं
तो हानि होकर यों हमारी दुर्दशा होती नहीं ।।१४।।

लेकर विदेशी टीन हम सानन्द चाँदी दे रहे,
देकर तथा सोना निरन्तर है गिलट हम ले रहे।
हम काँच लेकर दूसरों को दे रहे हीरे खरे,
निज रक्त के बदले मदोदक ले रहे हैं, हा हरे ॥१५॥

क्या इस पुरातनं देश में था समय ऐसा भी कभी-
अपनी प्रयोजन-पूर्ति जब करते स्वयं थे हम सभी ? ।
हाँ, यह न होता तो कभी का नाश हो जाता यहाँ,
इसका अभी तक चिह्नभी क्या दृष्टि में आता यहाँ ? ॥१६॥

जो दिव्य दर्शन शास्त्र की विख्यात है जन्मस्थली;
पहले जहाँ पर अंकुस्ति हो सभ्यता फूली-फली ।
संगीत, कविता, शिल्प की जननी वही भारत मही,
होगी किसे स्पर्धा कहे जो पर-मुखापेक्षी रही ? ॥१७॥

इतिहास में इस देश की वाणिज्य-वृद्धि प्रसिद्ध है,
अन्यान्य देशों से वहाँ सम्बन्ध इसका सिद्ध है।
बनकर यहाँ वर वस्तुएँ सर्वत्र ही जाती रहीं,
नर-रचित कहलाती न थीं, सुर-रचित कहलाती रहीं ।।१८।।

हिन्दू-कला कौशल्य पर संसार मुग्ध बना रहा,
जग में बिना संकोच सबने अद्‌वितीय इसे कहा।
"हारूँरशीद" तथा प्रतापी "शार्लमेंगन" की सभा,
है हो चुकी विस्मित निरखकर भारतीय पट-प्रभा ।।१९।।

सब वस्तुएँ उपहार के ही योग्य बनती थीं यहाँ,
संसार में होती उन्हीं की माँग थी देखी जहाँ। -
तब तो अतुल वैभव रहा, त्रुटि थी न कोई आय में,
सच है कि रमती है रमा वाणिज्य में, व्यवसाय में ।॥२०॥

हैं आज कश्मीरे विदेशी नाम पर जिसके चले,
बनते दुशाले हाय ! थे कश्मीर में कैसे भले ।
है विदित बंगाली किनारी धोतियों की आज भी,
पर है विदेशी आज वह, आती न हमको लाज भी ।। २१ ।।

ढाके, चंदेरी आदि की कारीगरी अब है कहाँ ?
हा ! आज हिन्दू-नारियों की कुशलता सब है कहाँ ?
थी वह कला या क्या, कि ऐसी सूक्ष्म थी; अनमोल थी,
सौ हाथ लम्बे सूत की बस आध रत्ती तोल थी ॥२२॥

रक्खा नली में बाँस की जो थान कपड़े का नया
आश्चर्य ! अम्बारी सहित हाथी उसी से ढँक गया !
वे वस्त्र कितने सूक्ष्म थे, कर लो कई जिनकी तहें-
शहजादियों के अंग फिर भी झलकते जिनमें रहें ॥२३॥

थे मुग्ध वस्त्रों पर हमारे अन्य देशी सर्वथा,
यूरोप के ही साहबों की हम सुनाते हैं कथा ।
वे लोग वस्त्रों को यहाँ के थे सदैव सराहते,
निज देश के पट मुफ्त में भी थे न लेना चाहते ॥२४॥

जिस भाँति भारतवर्ष का व्यापार नष्ट किया गया,
कर से तथा प्रतिरोध से जिस भाँति भ्रष्ट किया गया ।
वर्णन वृथा है उस विषय का, सोचना अब है यही-
किस भाँति उसकी वृद्धि हो, जैसी कि पहले थी रही ।॥२५॥

4. नवयुवक

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

जाति-धन प्रिय नव-युवक-समूह, विमल मानस के मंजु मराल ।
देश के परम मनोरम रत्न, ललित भारत-ललना के लाल ।।
लोक की लाखों आँखें आज, लगी हैं तुम लोगों की ओर ।
भरी उनमें है करुणा भूरि, लालसामय है ललकित कोर ।।

उठो, लो आँखें अपनी खोल विलोको अवनी तल का हाल।
अनालोकित में भर आलोक, करो कमनीय कलंकित भाल ।।
भरे उर में जो अभिनय ओज, सुना दो वह सुन्दर झनकार ।
ध्वनित हो जिससे मानस-यंत्र, छेड़ दो उस तंत्री का तार ॥
रगों में बिजली जावे दौड़, जगे भारत-भूतल का भाग ।
प्रभावित धुन से हो भरपूर, उमग गाओ वह रोचक राग ॥
हो सके जिससे सुघटित जाति, सुकंठों में गूंजे वह तान ।
भाव जिसमें हों भरे सजीव, करो ऐसे गीतों का गान ॥

कर विपुल साहस वज्र प्रहार, विफलता-गिरि को कर दो चूर ।
जगा सफल साधना-ज्योति, विविध बाधातम कर दो दूर ॥
गगन में जा, भूतल में घूम, निकालो कार्य-सिद्धि की राह ।
अचल को विचलित कर दो भूरि, रोक दो वारिधि-वारि-प्रवाह ।।
में क्यों मिलती है धाक, बचा लो बचाई आन ।
मचा दो दोषदलन की धूम, मसल दो दुख को मशक-समान ॥

लाभ-हित देश-प्रेम-रवि-ज्योति, आँख लो निज भावों को खोल ।
त्याग करके निजता-अभिमान, जाति-ममता का समझो मोल ॥
देश के हित निज-जाति-निमित्त, अतुल हो तुम लोगों का त्याग ।
अवनि-जन-अनुरंजन के हेतु, बनो तुम मूर्तिमान अनुराग ॥

अनाथों के कहलाओ नाथ, हरो अबला-जन-दुख अविलंब ।
सबलता करो जाति को दान, अबल-जन के होकर अवलंब ।।
बनो असहायों के सर्वस्व, अबुध-जन की अनुपम अनुभूति ।
वृद्ध जन के लोचन की ज्योति, अकिंचत-जन की विपुल विभूति ।।
सरस रुचि रुचिर कंठ के हार, सुजीवन-नव-घन-मत्त-मयूर ।
लोक-भावुकता-तन शृङ्गार, सुजनता-भव्य-भाल- सिंदूर ।।
भरो भूतल में कीर्तिकलाप, दिखा भारतजननी से प्यार ।
करो पूजन उनका पद-कंज, बना सुरभित सुमनों का हार ।।

5. गुरुदक्षिणा

रामकुमार वर्मा

बोले गुरु-
वत्स एकलव्य! तुम धन्य हो,
गुरु की प्रतिज्ञापूर्ति में प्रयत्नवान हो,
किंतु तुम देखो, आज गुरु की विवशता,
निज प्रणपूर्ति में जो बना असमर्थ है।

मेरी भावनाएँ जैसे सिन्धुकी तरंगें हैं,
जो तुम्हारे धनुर्वेद-कला-पूर्ण इन्दु को
देख-देख छूना चाहती हैं सदा, किन्तु वे
अपनी विवशता में गिर-गिर जाती हैं
जितना अभ्यास किया तुमने स्व-बल से,
कौन दूसरा करेगा इस पृथ्वी तल में !
अहंकार-शून्य हुए तुम जिस भाँति हो,
वैसा होगा कौन, योग्य बनकर इतना ?

गुरु-भक्ति तुमने की जिस भाँति शिष्य हो,
रेखा दृढ़ खींची सदा को क्षितिज रेखा-सी।

है परोक्ष भक्ति तुम्हारी, प्रत्यक्ष भक्ति से,
कितनी महान ! यह युग बतलायेगा !
ऐसा शिष्य पा के गुरु कितना कृतार्थ है !
उसकी कृतार्थता ही होगी 'गुरु-दक्षिणा...'

चौंक उठा एकलव्य, शब्द 'गुरु-दक्षिणा!'
जैसे कूर्ण-रन्ध्र पड़ा, विचलित हो उठा !
'मैंने धनुर्वेद पा के पूज्य गुरुदेव को,
गुरु दक्षिणा नहीं दी, कैसा हत-भाग्य हूँ।'

एकलव्य पीड़ा को दबाये उर कण्ठ से बोला-
'गुरुदेव दक्षिणा में देर हो गयी !
कीजिए स्वीकार, यह अर्पित है सेवा में!
अपने चरनों के समीप इसे स्थान दें।

पद के समीप रखा रक्तिमांगुष्ठ जब,
गुरु नेत्र झंपे, मुख फेर लिया पार्थ ने,
एकलव्य ने विनम्र रक्त-रंगे कर से,
गुरु-चरणों को छुआ, मस्तक झुका दिया।

गुरु-पद-तल के समीप अंगुष्ठ पड़ा,
जैसे लाल पंखुड़ी है श्रद्धा-रूपी फूल की,
या कि अनुराग ने है रूपरेखा रक्त में;
या कि गुरु-भक्ति जोड़ने की संधि रेखा है।

दारुण था दृश्य ! गुरु द्रोण हतप्रभ थे,
पार्थ भूमि में गड़े-से लज्जित मलीन थे;
और एकलव्य झुका पद-तल में,
रक्त-धारा में सना अंगुष्ठ रखा सामने !

भूमि लाल थी, था सूर्य पश्चिम में रक्तिम,
और बादलों ने एकलव्य-रक्त देख के
अपना शरीर रक्त-रंग से सजा लिया;
सारा नभ एकलव्य-दक्षिणा का रूप था।

पीड़ा-भूमि से उठा था अंकुर प्रमोद का,
एकलव्य बोला कुछ वाष्प भरे कण्ठ से-
'देव! इस दक्षिणा का मूल्य इतना ही है,
मेरी साधना को आप देख लेंगे पार्थ में।'

6. कुंती-कर्ण संवाद

रामधारी सिंह दिनकर

डूबते सूर्य को नमन निवेदित करके,
कुन्ती के पद की धूली शीश पर धर के।
राधेय बोलने लगा बड़े ही दुख से,
तुम मुझे पुत्र कहने आयी किस मुख से ?

क्या तुम्हें कर्ण से काम ? सूत है वह तो,
माता के तन का मल अपूत है वह तो।
तुम बड़े वंश की बेटी ठकुरानी हो।
अर्जुन की माता, कुरु-कुल की रानी हो।

मैं नाम-गोत्र से हीन; दीन खोटा हूँ,
सारथीपुत्र हूँ, मनुज बड़ा छोटा हूँ।
ठकुरानी, क्या लेकर तुम मुझे करोगी ?
मल को पवित्र गोदी में कहाँ धरोगी ?

है कथा जन्म की ज्ञात, न बात बढ़ाओ,
मत छेड़-छाड़ मेरी पीड़ा उकसाओ।
हूँ खूब जानता, किसने मुझे जना था,
किसके प्राणों पर मैं दुर्भार बना था।

सह विविध यातना मनुज जन्म पाता है,
धरती पर शिशु भूखा-प्यासा आता है।
माँ सहज स्नेह से हो प्रेरित अकुला कर,
पय-पान कराती उर से उसे लगा कर।

मुख चूम जन्म की क्लांति हरण करती है,
दृग से निहार अँग में अमृत भरती है।
पर, मुझे अंक में उठा न ले पाई तुम,

पय का पहला आहार न दे पाई तुम।
उलटे, मुझको असहाय छोड़ कर जल में,
तुम लौट गयी इज्जत के बड़े महल में।
मैं बचा अगर तो अपने आयुर्बल से,
रक्षा किसने की मेरी काल-कवल से ?

क्या कोर-कसर तुमने कोई भी की थी ?
जीवन के बदले साफ-मृत्यु ही दी थी।
पर तुमने जब पत्थर का किया कलेजा,
असली माता के पास भाग्य ने भेजा !

अब जब सब कुछ हो चुका, शेष दो क्षण हैं,
आखिरी दाँव पर लगा हुआ जीवन है,
तब प्यार बाँधकर के अंचल के पट में,
आयी हो निधि खोजती हुई मरघट में।

अपना खोया संसार न तुम पाओगी,
राधा माँ का अधिकार न तुम पाओगी।
छीनने स्वत्व उसका तो तुम आयी हो
पर कभी बात यह भी मन में लायी हो?

उसको सेवा, तुमको सुकीर्ति प्यारी है,
तुम ठकुरानी हो, वह केवल नारी है।
तुमने तो तन से मुझे काढ़ कर फेंका,
उसने अनाथ को हृदय लगाकार सेंका।

उमड़ी न स्नेह की उज्ज्वल धार हृदय से।
तुम सूख गयी मुझको पाते ही भय से।
पर, राधा ने जिस दिन मुझको पाया था,
कहते हैं, उसको दूध उतर आया था।

तुमने जन कर भी नहीं पुत्र को जाना,
उसने पा कर भी मुझे तनय निज माना।
अब तुम्हीं कहो कैसे आत्मा को मारूँ ?
माता कह उसके बदले तुम्हें पुकारूँ?

है वृथा यत्न हे देवि मुझे पाने का,
मैं नहीं वंश में फिर वापस जाने का।
दी बिता आयु सारी कुलहीन कहा कर,
क्या पाऊँगा अब उसे आज अपना कर ?

यद्यपि जीवन की कथा कलंकमयी है,
मेरे समीप लेकिन, वह नहीं नयी है।
जो कुछ तुमने है कहा बड़े ही दुख से,
सुन उसे चुका हूँ मैं केशव के मुख से।

जाने सहसा, तुम सब ने क्या पाया है;
जो मुझ पर इतना प्रेम उमड़ आया है।
अब तक न स्नेह से कभी किसी ने हेरा,
सौभाग्य किन्तु, जग पड़ा अचानक मेरा।

मैं खूब समझता हूँ कि नीति यह क्या है,
असमय में जन्मी हुई प्रीति यह क्या है।
जोड़ने नहीं बिछुड़े वियुक्त कुलजन से,
फोड़ने मुझे आयी हो दुर्योधन से,

सिर पर आकर जब हुआ उपस्थित रण है,
हिल उठा सोच परिणाम तुम्हारा मन है।
अंक में न तुम मुझको भरने आयी हो,
कुरुपति को कुछ दुर्बल करने आयी हो।

अन्यथा, स्नेह की वेगमयी यह धारा,
तट को मरोड़, झकझोर तोड़ कर कारा।
भुज बढ़ा खींचने मुझे न क्यों आयी थी?
पहले क्यों यह वरदान नहीं लायी थी?

केशव पर चिन्ता डाल अभय हो रहना,
इस पार्थ भाग्यशाली का भी क्या कहना।
ले गये मांग कर जनक, कवच-कुंडल को,
जननी कुंठित करने आयी रिपु दल को।

लेकिन, यह होगा नहीं देवि ! तुम जाओ,
जैसे भी हो सुत का सौभाग्य मनाओ।
दें छोड़ भले ही कभी कृष्ण अर्जुन को,
मैं नहीं छोड़नेवाला दुर्योधन को।

कुरुपति का मेरे रोम-रोम पर ऋण है,
आसान न होना उससे कभी उऋण है।
छल किया अगर, तो क्या जग में यश लूँगा ?
प्राण ही नहीं, तो उसे और क्या दूँगा?

हो चुका धर्म के ऊपर न्योछावर हूँ,
मैं चढ़ा हुआ नैवेद्य देवता पर हूँ।
अर्पित प्रसून के लिए न यों ललचाओ,
पूजा की वेदी पर मत हाथ बढ़ाओ।

राधेय मौन हो रहा व्यथा निज कह के,
आँखों से झरने लगे अश्रु बह-बह के।
कुन्ती के मुख में वृथा जीभ हिलती थी,
कहने को कोई बात नहीं मिलती थी।

7. बादल को घिरते देखा है

नागार्जुन

अमल धवल गिरि के शिखरों पर, बादल को घिरते देखा है !
छोटे-छोटे मोती जैसे, अतिशय शीतल वारि-कणों को
मानसरोवर के उन स्वर्णिम-कमलों पर गिरते देखा है !
तुंग हिमाचल के कन्धों पर, छोटी-बड़ी कई झीलों के,
श्यामल, शीतल, अमल सलिल में
समतल देशों से आ-आकर
पावस की ऊमस ले आकुल,
तिक्त मधुर बिस-तन्तु खोजते, हंसों को तिरते देखा है !

एक-दूसरे से वियुक्त हो,
अलग-अलग रह कर ही जिन को
सारी रात बितानी होती ।
निशाकाल के चिर-अभिशापित
बेबस उन चकवा-चकई का,
बन्द हुआ क्रन्दन-फिर उन में
उस महान सरवर के तीरे
शैवालों की हरी दरी पर, प्रणय-कलह छिड़ते देखा है !

कहाँ गया धनपति कुबेर वह, कहाँ गयी उसकी वह अलका ?
नहीं ठिकाना कालिदास के व्योम-वाहिनी गंगाजल का,
ढूंढा बहुत परन्तु लगा क्या, मेघदूत का पता कहीं पर
कौन बतावे यह यायावर, बरस पड़ा होगा न यहीं पर !
जाने दो, वह कवि-कल्पित था,
मैंने तो भीषण जाड़ों में, नभ-चम्बी कैलास-शीर्ष पर
महामेघ को झांझतिल से गरज-गरज भिड़ते देखा है।

दुर्गम बर्शनी घाटी में,
शत-सहस्र फुट उच्च शिखर पर
अलख नाभि से उठने वाले
अपने ही उन्मादक परिमल
के ऊपर धावित हो-हो कर
तरल तरुण कस्तूरी मृग को अपने पर चिढ़ते देखा है !
शत-शत निर्झर-निर्झरिणी-कल
मुखरित देवदारु-कानन में

शोणित-धवल भोज- पत्रों से छायी हुई कुटी के
रंग-बिरंगे और सुगंधित फूलों से कुन्तल को साजे,
इन्द्रनील की माला डाले शंख-सरीखे सुगड़ गले में,
कानों में कुवलय लटकाये, शतदल रक्त-कमल वेणी में,
रजत-रचित मणि-खचित कलामय पानपात्र द्राक्षासव पूरित,
रखे सामने अपने-अपने लोहित चन्दन की त्रिपदी पर
नरम निदान बाल कस्तूरी मृग-छालों पर पल्थी मारे,
मदिरारुण आँखों वाले उन उन्मद किन्नर किन्नरियों की
मृदुल मनोरम अंगुलियों को वंशी पर फिरते देखा है।

8. कैदी और कोकिला

माखन लाल चतुर्वेदी

क्या गाती हो ?
क्यों रह-रह जाती हो ?
कोकिल बोले तो !
क्या लाती हो ?
संदेशा किसका है ?
कोकिल बोलो तो !

ऊँचो काली दीवारों के घेरे में,
डाकू, चोरों, बटमारों के डेरे में,
जीने को देते नहीं, पेट भर खाना,
मरने भी देते नहीं, तड़प रह जाना !
जीवन पर अब दिन-रात कड़ा पहरा है,
शासन है, या तम का प्रभाव गहरा है?
हिमकर निराश कर चला रात भी काली,
इस समय कालिमामयी जगी क्यूं आली ?

क्यों हूक पड़ी ?
वेदना-बोझ वाली-सी,
कोकिल बोलो तो !
क्या लुटा ?
मृदुल वैभव की रखवाली-सी
कोकिल बोलो तो !

बन्दी सोते हैं, है घर्-घर् श्वासों का,
दिन के दुख का रोना है निश्वासों का,
अथवा स्वर है लोहे के दरवाजों का,
बूटों का, या संत्री की आवाजों का,
या गिनने वाले करते. हाहाकार ।
सारी रातों है - एक, दो, तीन, चार---!
मेरे आंसू की भरी उभय जब प्याली,
बेसुरा ! मधुर क्यों गाने आयी आली ?

क्या हुई बावली ?
अर्द्ध रात्रि को चीखी,
कोकिल बोलो तो !
किस दावानल की
ज्वालाएँ हैं दीखीं ?
कोकिल बोलो तो !

निज मधुराई को कारागृह पर छाने,
जो के घावों पर तरलामृत बरसाने,
या वायु-विटप-वल्लरी चीर, हठ ठाने
दीवार चीरकर अपना स्वर अजमाने,
या लेने आईं इन आंखों का पानी ?
नभ के ये दीप बुझाने की है ठानी !
खा अंधकार करते वे जग रखवाली
क्या उनकी शोभा तुझे न भाई आली ?
तुम रवि-किरणों से खेल,
जगत् को रो रोज़ जगानेवाली,
कोकिल बोली तो ?
क्यों अर्द्ध रात्रि में विश्व
जगाने आई हो ? मतवाली
कोकिल बोली तो ?

दूबों के आँसू धोती रवि-किरनों पर,
मोती बिखरातो विन्ध्या के झरनों पर,
ऊँचे उठने के व्रतधारी इस वन पर,
ब्रह्मांड कंपाती उस उद्दंड पवन पर,
तेरे मीठे गीतों का पूरा लेखा
मैंने प्रकाश में लिखा सजीला देखा ।

तब सर्वनाश करती क्यों हो,
तुम, जाने या बेजाने ?
कोकिल बोली तो !
क्यों तमोपत्र पर विवश हुई
लिखने चमकीली- तानें ?
कोकिल बोलो तो !

क्या ? -- देख न सकती जंजीरों का गहना,
हथकड़ियाँ क्यों ? यह ब्रिटिश राज का गहना,
कोल्हू का चरंक चूँ ? -- जीवन की तान,
गिट्टी पर अँगुलियों ने लिक्खे गान ?
हूँ मोट खींचता लगा पेट पर जूआ,
खाली करता हूँ ब्रिटिश अकड़ का कुआ ।
दिन में करुणा क्यों जगे, रुलानेवाली,
इसलिए रात में गजब ढा रही आली ?

इस शान्त समय में,
अन्धकार को बेध, रो रही क्यों हो ?
कोकिल बोलो तो !
चुपचाप, मधुर विद्रोह- बीज
इस भाँति बो रही क्यों हो ?
कोकिल बोलो तो !

काली तू, रजनी भी काली,
शासन की करनी भी काली,
काली लहर कल्पना काली,
मेरी काल कोठरी काली,
टोपी काली कमली काली,
मेरी लौह-श्रृंखला काली,
पहरे की हुंकृति की व्याली,
तिसपर है गाली, ऐ आली !

इस काले संकट-सागर पर
मरने की, मदमाती !
कोकिल बोलो तो !
अपने चमकीले गीतों को
क्योंकर हो तेराती !
कोकिल बोलो तो !

तेरे 'माँगे हुए' न बेना,
री, तू नहीं बंदिनी, मैना,
न तू स्वर्ण-पिजड़े की पाली,
तुझे न दाख खिलाये आली !
तोता नहीं, नहीं तू - तूती,
तू स्वतन्त्र, बलि, की गति कूती
तब तू रण का ही प्रसाद है,
तेरा स्वर बस शंखनाद है ।

दीवारों के उस पार !
या कि इस पार दे रही गूंजें ?
हृदय त्याग टटोलो तो !
त्याग शुक्लता,
तुझ काली को, आर्य-भारती पूजे,

कोकिल बोली तो !
तुझे मिली हरियाली डाली,
सुझे नसीब कोठरी काली !
तेरा नभ भर में संचार
मेरा दस फुट का संसार !
तेरे गीत कहावें वाह,
रोना भी है मुझे गुनाह !
देख विषमता तेरी मेरी,
बजा रही तिस पर रण-भेरी !

इस हुंकृति पर,
अपनी कृति से और कहो क्या कर दूँ,
कोकिल बोलो तो !
मोहन के व्रत पर,
प्राणों का आसव किसमें भर दूँ !
कोकिल बोलो तो !

फिर कुहू !....अरे क्या बन्द न होगा गाना ?
इस अंधकार में मधुराई दफ़नाना ?
नभ सोच चुका है कमजोरों को खाना
क्यों बना रही अपने को उसका दाना ?
फिर भी करुणा-गाहक बन्दी सोते हैं,
स्वप्नों में स्मृतियों की श्वासें धोते हैं।
इन लोह-सीखचों की कठोर पाशों में
क्या भर दोगी ? बोलो निद्रित लाशों में ?

क्या ? घुस जायेगा रुदन
तुम्हारा निश्वासों के द्वारा,
कोकिल बोलो तो
और सवेरे हो जायेगा
उलट-पुलट जग सारा,
कोकिल बोलो तो !

9. वीरों का कैसा हो बसन्त

सुभद्राकुमारी चौहान

वीरों का कैसा हो बसन्त ?
आ रही हिमांचल से पुकार,
है उदधि गरजता बार-बार,
प्राची, पश्चिम, भू, नभ अपार,
सब पूछ रहे हैं दिग्-दिगन्त,
वीरों का कैसा हो बसन्त ?

फूली सरसों ने दिया रंग,
मधु लेकर आ पहुँचा अनंग,
वधु-वसुधा पुलकित अंग-अंग,
है वीर देश में किन्तु कन्त,
वीरों का कैसा हो बसन्त ?
भर रही कोकिला इधर तान,
मारू बाजे पर उधर गान,
है रंग और रण का विधान,
मिलने आये हैं आदि अन्त,
वीरों का कैसा हो बसन्त ?

गलबाँहें हों, या हो कृपाण,
चल चितवन हो, या धनुष-बाण,
हो रस-विलास या दलित-त्राण,
अब यही समस्या है दुरन्त,
वीरों का कैसा हो बसन्त ?

कह दे अतीत अब मौन त्याग,
लंके ! तुझमें क्यों लगी आग ?
ऐ कुरुक्षेत्र ! अब जाग, जाग,

बतला अपने अनुभव अनन्त,
वीरों का कैसा हो बसन्त ?

हल्दीघाटी के शिला-खंड !
ऐ दुर्ग सिंह-गढ़ के प्रचंड !
राणा, ताना का कर घमंड,

दो जगा आज स्मृतियाँ ज्वलन्त,
वीरों का कैसा हो बसन्त ?

भूषण अथवा कवि चन्द नहीं;
बिजली भर दे वह छन्द नहीं;
है कलम बँधी, स्वच्छन्द नहीं,

फिर हमें बतावे कौन ! हन्त !
वीरों का कैसा हो बसन्त ?

******

<u>**परिशिष्ट :**</u>

कवि परिचय

1. कबीरदास

कबीरदास के धर्मपिता का नाम नीरू तथा माता का नाम नीमा था । जाति के वे जुलाहा थे। अपने इस व्यवसाय को वे इतनी अधिक प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखते थे कि मृत्युपर्यंत इसीके द्वारा अपनी आजीविका चलाते रहे। जाति-पाँति की दीवार को तोड़कर सबको अपनी भक्ति-परंपरा में सम्मिलित करनेवाले स्वामी रामानंद के वे शिष्य थे ।

उनकी समस्त कृतियाँ तीन भागों में विभक्त हैं - साखी पदावली (सबद) और रमनी। 'साखी' में दोहे और कहीं-कहीं एकाध सोरठे भी हैं जिनमें अनेक उपदेशप्रद बातें कही गयी हैं। 'पदावली' में बाह्याडंबरों के प्रति तीव्र आक्रोश व्यक्त किया है तथा ब्रह्म, जीव और माया के रहस्यात्मक वर्णन के साथ भगवत्-प्रेम की पराकाष्ठा दिखायी है। 'रमैनी' में हम उनके सिद्धांत का विशिष्ट रूप पाते हैं । इसमें साखी और पदावली में प्रयुक्त विषयों के सिवाय उपदेश, गुरु और राम-संबंधी भजन तथा योग, सत्संग और कर्तानिर्णय तथा कर्ता के स्वरूप-संबंधी अनेक पद हैं ।

उनके काव्य में हृदयपक्ष की प्रधानता है। काव्य-कला की दृष्टि से देखने पर उनके पद्य काव्य की कसौटी पर खरे नहीं उत्तरते । यहाँ तक कि अनेक दोहे पिंगल के नियमों के प्रतिकूल हैं, पदों का भी यही हाल है। पर भाव, रस, प्रेम और भक्ति की दृष्टि से उनकी कृतियाँ अनुपम हैं। हिंदी साहित्य में व्यंग्यात्मक शैली के सर्वप्रथम आविष्कर्त्ता वे ही हैं। उनकी रचनाओं में 'बीजक' मुख्य है।

2. मीराबाई

मीराबाई का जन्म मेड़ता (राजस्थान) में हुआ था। वह रत्नसिंह की पुत्री और राव दूदाजी की पौत्री थी। उनका विवाह उदयपुर के महाराणा भोजराज के साथ हुआ था, जो विवाह के कुछ समय बाद ही अचानक काल-कवलित हो गये।

यों तो बचपन से ही नटनागर कृष्ण के प्रति उनकी पूर्ण भक्ति थे । परंतु वैधव्य के वज्रपात ने उनके हृदय में एक तीव्र वेदना उत्पन्न की, जिसके कारण वे भक्ति में विभोर हो स्वयं गिरिधरमय हो गयीं। कृष्ण के प्रति इस तल्लीनता को देखकर उनके बंधुजनों ने उन्हें बहुत कष्ट पहुँचाया। कहा जाता है कि मार्गदर्शन के लिए उन्होंने गोस्वामी तुलसीदासजी को भी पत्र लिखा था। 'जाके प्रिय न राम वैदेही, सो नर छाँड़िये कोटि वैरि सम जदपि परम सनेही' उत्तर देकर गोस्वामीजी ने उन्हें भगवद्भक्ति की ओर प्रवृत्त किया । संत रैदास उनके दीक्षागुरु थे ।

मीराबाई हिन्दी की श्रेष्ठ कवयित्री हैं। कृष्णभक्ति शाखा के कवियों में उनका स्थान सूरदास के बाद आता है। विद्यापति, कबीर, सूर और तुलसी आदि भक्त कवियों की तरह उनके पद भी लोगों के कंठहार बने हुए हैं। भाषा से अपरिचित होने पर भी दक्षिणवासी उनके पदों को सुन 'आण्डाल' के पदों की तरह रस का अनुभव करते हैं ।

मीरा के गीत उनकी अन्तरात्मा की पुकार हैं। उनमें हृदय की कसक है, वियोगिनी का आर्त-क्रंदन है, आत्म-निवेदन है और है मार्मिकता तथा कोमलता का अद्भुत मिश्रण ।

मीरा के लिए गिरधर गोपाल ही सर्वस्व है। अतः मीरा अपने प्रभु कृष्ण के नाम का जप करती और गुणगान करती है।

3. मैथिलीशरण गुप्त

आधुनिक हिन्दी काव्यधारा में राष्ट्रीयता की भावना को काव्य द्‌वारा जागृत करने वाले कवियों में मैथिलीशरण गुप्त भी एक है। देशभक्त, सामाजिक जागरूकता, नारी सम्मान, स्वावलम्बन भावनाओं को कवि की कृतियों में यत्र-तत्र देखा जा सकता है। उनका योगदान इस युग की हर दिशा में रहा। कवि ने हिन्दी साहित्य और समाज के उपेक्षित नारी पात्रों की मनोवैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत कर, उन्हें लोकप्रिय बनाने का बीड़ा उठाया। कैकेयी, उर्मिला, यशोधरा आदि नारी पात्र इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। रामकथा पर आधारित 'साकेत' कवि का पहला महाकाव्य है, जिसमें जीवन- दर्शन और मूल्यों की मार्मिक व्याख्या प्रस्तुत की गई है। 'भारत भारती' काव्य को आधुनिक युग की गीता कहा जाता है।

'व्यापार' शीर्षक कविता 'भारत-भारती' से ली गई है। अंग्रेजी सरकार के भारत में आने के बाद उसकी साम्राज्यवादी नीतियों ने देश की अर्थ व्यवस्था पर चोट की। यह पहला अवसर था जबकि अंग्रेजी सरकार ने देश की आन्तरिक व्यवस्था पर अपना अधिकार जताया था। उन्होंने वर्ग भेद पैदा कर देश की आन्तरिक व्यवस्था को भी बिगाड़ डाला, जिसका प्रभाव जनसाधारण पर पड़ा।

4. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

ब्रजभाषा और खड़ी बोली को काव्य उपयुक्त सिद्ध करने में कवि हरिऔध का योगदान बड़ा ही महत्वपूर्ण है । 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य खड़ी बोली का पहला महाकाव्य माना जाता है। इस प्रबंध काव्य में राधा और कृष्ण का चरित्र गांधीयुग के अनुकूल चित्रित करने का प्रयास किया गया है। कोमलकान्त पदावली का प्रयोग कर कवि ने काव्य का रस खूब बढ़ाया है। उनकी रचनाएँ बोल-चाल की भाषा के बहुत निकट और मुहावरेदार है। अलंकारों का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में हुआ है। भाषा और भाव पर पूर्ण अधिकार होने के कारण कवि 'हरिऔध' का आधुनिक काव्य जगत में अपना महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

'नवयुवक' नामक कविता में कवि ने भारत के नवयुवकों को अपने कर्तव्य की ओर प्रेरित किया है। सबल और असहाय का सहायक बनकर कवि नवयुवकों को भारत माता के प्रति प्रेम करने को उकसाता है ।

5. रामकुमार वर्मा

रामकुमार वर्मा छायावादी धारा के कवियों में एक हैं। रहस्य और अध्यात्म की पृष्ठभूमि में कवि ने भावनामय सुन्दर गीत प्रस्तुत किये हैं। 'अंजलि', रूपराशि और चित्ररेखा काव्य संग्रहों में उनकी रहस्यवादी स्वरधारा करुणा के रूप में प्रवाहित हुई है। कवि की मुख्य भावभूमि प्रणय है, प्रकृति के सुन्दर और मनोहर चित्र भी प्राप्त हैं। शब्दप्रयोग, अनुभूति का मर्म और गीतों की गेयता कवि के काव्य शिल्प की अपनी ही विशेषता है।

प्रस्तुत कविता 'गुरुदक्षिणा' में कवि ने उपेक्षित शुद्र-प्रतिभा के आदर्श को चित्रित किया है। गुरु द्रोणाचार्य की क्रीत विचारधारा के कारण एकलव्य की असाधारण धनुर्विद्या भी नष्ट हो गई। कवि ने इसे भावुकता के स्तर पर बड़े ही सुन्दर, सहज और सरल ढंग से स्पष्ट किया है। गुरु का आदर्श वेतन भोगी और स्वार्थी होने के कारण नैतिकता की सीमा का उल्लंघन करता हुआ दिखाई देता है ।

6. रामधारी सिंह 'दिनकर'

कवि दिनकर ने भारतीय जनता की राष्ट्रीय भावना को काव्य द्वारा प्रतिध्वनित किया है। राष्ट्रवादी भावना के साथ प्रणय और प्रेम का मिलन सहज ही उनके काव्य में देखा जा सकता है। 'रेणुका' कवि की'पहली रचना है, जिसमें प्रणय की अनुभूति का मार्मिक चित्रण है। 'हुंकार' में कवि की राष्ट्रीय भावना प्रकट हुई है। 'रसवंती' में कवि की दृष्टि सौन्दर्योपासक का रूप बन जाती है। 'कुरुक्षेत्र' प्रबंध में मानव जाति की चिरन्तन समस्या और युद्ध का विवेचन है। महानगर के कथानक की पृष्ठभूमि में युद्ध के उचित- अनुचित के प्रश्न पर कवि की भावना व्यक्त हुई है। 'रश्मिरथी' और 'उर्वशी' में कवि ने गम्भीर विश्लेषण, अटूट आस्था और प्रगतिशीलता को प्रमाणित किया है।

'कुंती-कर्ण संवाद' कविता प्रसंग में माता कुंती कर्ण के पास मातृस्नेह जताते हुए कर्ण को पाण्डवों के विरोध युद्ध न करने के लिए कहती है। कर्ण जो दुर्योधन की मित्रता का ऋणी था, धर्म का निर्वाह करता है और कुंती को उसके मातृत्व रूप को प्रकट करते हुए लज्जित और असहाय-सा बना देता है, जिससे उसे अपनी भूल का प्रायश्चित्त करना पड़े।

7. नागार्जुन

भले ही कवि एवं कथाकार नागार्जुन का जीवन स्वयं में संघर्ष से पूर्ण हो किन्तु काव्य जगत में भावुकता और कल्पना दूर यथार्थ की दृष्टि अपनाई है। जिन्दगी की खुली किताब से सीखनेवाले इस कवि पर अनुभव का असीम भंडार है । शासन की विसंगतियाँ, लोगों के स्वार्थी और अवसरवादी चेहरे, व्यक्तिवादी धारणा पर ही कवि की लेखनी चली है। स्वतंत्र भावना, विद्रोही प्रकृति और यथार्थ वर्णन कवि काव्य की विशेषता है।

"बादल को घिरते देखा है" कविता में कवि ने प्रकृति की हर वस्तु का अनुभव निकटता से किया है। सदैव उनकी कविता सत्य का वर्णन करती है, कल्पना लोक का नहीं । प्रकृति में विचरण करता कवि हृदय उसी में लीन हो जाता है। हिमालय पर्वत की हिम से ढकी चोटियों पर एकाएक मुग्ध हो जाता है । पौराणिक संदर्भ याद आने लगते हैं, जिनकी वे प्रेरणा पा चुके थे । ऐसा लगता है प्रकृति का स्वच्छंद वातावरण, ऋषि-मुनियों की साधना- स्थली, वन जीवों का स्वतंत्र घूमना, आदि परिवेश कवि का साथी बनकर प्रस्तुत हो गया हो ।

8. माखनलाल चतुर्वेदी

कवि माखनलाल चतुर्वेदी की रचनाओं में राष्ट्रीय भावना, प्रेम को मार्मिक अनुभूति और आध्यात्मिकता ही मुख्य विषय बने हैं। इनके राष्ट्रीय काव्य में त्याग एवं उत्सर्ग की भावना का सुन्दर समावेश देखने को मिलता है । कल्पना में नवीनता, विविध भावनाओं का संगम कवि के काव्य की आत्मा है । देशभक्ति का जो उदार स्वरूप कवि की कविता में मिलता है, वैसा अन्य कवियों में बहुत कम दिखाई देता है। काव्य की भाषा खड़ी बोली तो है ही साथ हो उसमें प्रवाह एवं ओज भी है। सच तो यह है कि कवि माखनलाल चतुर्वेदी 'एक भारतीय आत्मा' के रूप में स्वीकारे गये हैं ।

'कैदी और कोकिला' कवि की सुप्रसिद्ध रचना है । जेल के जीवन के स्वानुभव को कवि ने इस कविता में प्रस्तुत किया है। कैदी अपनी अंधेरी कोठरी में बंद है। रात का घना सन्नाटा छाया है। तब कहीं से उसे कोकिल की मधुर बोली सुनाई पड़ती है। परस्पर वार्तालाप होने लगता है। आशा की किरण पा कवि अंत में कह उठता है कि 'प्रभात में संसार का रूप बदलेगा । क्रांति सफल होगी । भारत दासता से मुक्त हो जाएगा ।'

9. सुभद्रा कुमारी चौहान

सुभद्रा कुमारी चौहान का जन्म इलाहाबाद जिले के निहालपुर गांव में सन् 1905 में हुआ। इन्होंने सन् 1921 में असहयोग आंदोलन के प्रभाव से शिक्षा को अधूरी छोड़कर राजनीति में सक्रिय भूमिका निभाई। यह ब्रिटिश सरकार की दमन नीति के कारण कई बार जेल भी गई। इन्होंने बहुत कम लिखीं पर अनूठी रचनाएं की। इनकी कविताओं में राष्ट्रीय प्रेम और पारिवारिक स्नेह की भावनाएं अनोखे अंदाज में अभिव्यक्त हुई हैं। झांसी की रानी, मेरा नया बचपन कविताएं इस विलक्षण दृष्टि के परिचायक हैं। सुभद्रा कुमारी चौहान की कविताएं "त्रिधारा" और "मुकुल" में संग्रहीत हैं। सन् 1948 को अल्प आयु में ही इनका देहवासन हुआ। हिंदी के शुद्ध आलोचक डॉक्टर बच्चन सिंह ने उनकी कविता की यूं समीक्षा की है "उन्होंने तत्कालीन राष्ट्रीय भावनाओं को ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भों से इस प्रकार से जोड़ा है कि कहीं जोड़ नहीं दिखाई पड़ता और न ही कवित्व का क्षरण हुआ है।"

"वीरों का कैसा हो वसंत" कवियित्री की लोकप्रिय कविताओं में से एक है। कवियित्री वीरता, साहस और बलिदान की पुजारिन हैं। वे स्वतंत्रता के महारथी महाराणा प्रताप एवं वीर शिवाजी की आराधिका हैं पर गांधीजी के सत्याग्रह-पथ पर चलने को बाध्य हैं। वे बड़े ही असमंजस में फंस गई हैं। वे हिंसा-मार्ग का अनुगमन करें अथवा शांति-पथ का अनुसरण करें? इस कविता में उनकी इस दुविधा और छटपटाहट का सशक्त चित्रण पाया जाता है।